International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 1377-1379

भारत की अनुसूचित जनजातियों का सामाजिक व पारिवारिक स्थिति

सवित्रा देवी[1], डॉ० एस० के० महतो[2]
[1] शोधार्थी, श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश, भारत।
[2] शोधपर्यवेक्षक, श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत जिन्हें जनजाति के नाम से संबोधित किया जाता है, उनके संबध में यह विशेष स्मरणीय है कि वे ही भारतीय प्रागैतिहासिक काल के निवासी हैं। सर्वविदित है कि वे किसी एक नस्ल की संतान नहीं है तथा उन्होंने अलग – अलग समय में एशिया के विभिन्न क्षेत्रों से भारत में प्रवेश किया। फिर भी इन्हें एक निश्चित समुदाय के नाम से संबोधित करने का प्रयास सर्वप्रथम स्वतंत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 के द्वारा किया गया है। इसी प्रकार भारतीय सरकार द्वारा इनके हितों की रक्षा करने के लिए सन् 1956 ई. में एक सूची तैयार की गई जिसे ''शिडयूल कास्ट्स एंड शिड्यूल्स ट्राइव्स लिस्ट्स मॉडीफिकेशन आर्डर 1956'' कहते हैं। संविधान के अनुच्छेद 414 के अनुसार इन्हें मूल जनजाति और उप जनजाति में विभक्त किया गया है। इसके अनुसार आज भारतवर्ष में 550 जनजातियाँ निवास करती हैं। इन्हें भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति के वर्ग में घोषित किया गया है। सन् 1961 की जनगणना प्रतिवेदन के अनुसार जनजातियों की कुल जनसंख्या 2,98,83,470 है जिनमें 1,50,40,707 पुरुष और 1,48,42,763 स्त्रियाँ हैं।

2001 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 70,97,706 है जो भारत की कुल जनसंख्या का 8.4 प्रतिशत है। राजस्थान की प्रमुख 12 जनजातियों में मीणा जनजाति सर्वाधिक मात्रा में है। इसकी जनसंख्या 37,99,971 है जो कुल जनजाति जनसंख्या का 53.5 प्रतिशत है जबकि गरासिया, डामोर, धानका और सहरिया जैसे कुल जनजातियों की जनसंख्या का 6.6 प्रतिशत है तथा अन्य जनजातियों, जिसमें भील, नाकड़ा, कथोड़ी, पटेलिया, कोकणा, व कोलीढोर मुख्य है, की कुल जनसंख्या 37,99,971 है जो कुल जनजाति जनसंख्या का मात्र 0.3 प्रतिशत ही है। 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 93,89,383 जो भारत की कुल जनसंख्या का 13.2 प्रतिशत हैं जिसमें मीणा जनजाति की संख्या 49,77,512 हैं जो कुल जनजातीय जनसंख्या का 65.3 प्रतिशत हैं जबकि गरासिया, डामोर, धानका और सहरिया जैसे कुल जनजातियों की जनसंख्या का 9.8 प्रतिशत है तथा अन्य जनजातियों जिसमें भील, नाकड़ा, कथोड़ी, पटेलिया, कोकणा, व कोलीढोर मुख्य है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण

विश्व के अधिकांश देशों में जनजाति निवास करते है एवं उन्हें विभिन्न नस्लों एवं नामों से पुकारा जाता है। भारतवर्ष के प्राचीन निवासियों को जिन छः नस्लों की संतान बताया गया है उन्हें ऋग्वेद में आर्य और अनार्य दो नामों से संबोधित किया गया है। इन दोनों में से अनार्य भारतवर्ष के प्राचीन निवासी हैं और प्राचीन साहित्य में उन्हें अनेक शब्दों से संबोधित किया गया है, जैसे– चपटी नाक वाले, सदा घूमने वाले, लिंग व योनि की पूजा करने वाले दस्यु (दास), शूद्र आदि। आधुनिक भाषा में उन्हें जनजाति कहते हैं।

जनजाति समुदाय आदिकाल से आत्मरक्षा करते हुए बीहड़ जंगलों तथा पर्वतों में जीविकोपार्जन करते आए हैं, सभ्यता के प्रभाव से वंचित रहने एवं आयुध जीवी होने के कारण इनकी संस्कृति विकसित नहीं हो पाई। जनजातियों का सारा ध्यान स्वयं के अस्तित्व रक्षार्थ में लगा हुआ था, फलस्वरूप इनके सामाजिक स्थिति अन्य जातियों से भिन्न रही। इन जनजातियों की सामाजिक स्थिति को निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से सहजता पूर्वक समझा जा सकता है–

परिवार

जनजातियों में संयुक्त परिवार प्रधान प्रथा है। परिवार पितृसत्तात्मक पाये जाते हैं। परिवार में ज्येष्ठ पुत्र का विशेष अधिकार व उत्तरदायित्व होता है। परिवार में मुखिया का स्थान न केवल महत्वपूर्ण होता है वरन् उनका निर्णय अन्तिम माना जाता है। जनजाति समुदाय में पत्नियों का समाज में सम्मानजनक स्थान होता है। वे पुरूषों के साथ कृषि कार्य में न केवल हाथ बँटाती है अपितु पतियों से भी ज्यादा मेहनत करती है। परिवार के सभी सदस्य एक साथ रहते हैं। छोटे सदस्य से लेकर बड़ों तक कार्य का विभाजन हुआ रहता है। परिवार के मुखिया के पश्चात् ज्येष्ठ पुत्र का स्थान होता है।

वेशभूषा

वनवासी होने के कारण जनजातीय लोग सीमित वस्त्र पहनते हैं। पुरूषों की वेशभूषा में कमीज, अंगरखी एवं धोती, पगड़ी प्रमुख हैं। पुरूष की वेशभूषा में कंधे पर रूमाल रखने का प्रचलन है। घाघरा, ओढ़नी, आँगी कब्जा, कुर्ता इत्यादि स्त्रियों के प्रमुख परिधान है। परन्तु शिक्षा के प्रभाव से इनकी वेशभूषा में काफी बदलाव आया है। घाघरा के स्थान पर सलवार कुर्ता एवं साड़ी का प्रचलन बढ़ा है। आभूषण स्त्रियों एवं पुरूषों दोनों में सामान्य रूप से प्रचलित हैं। प्रमुख आभूषणों में कानों में सोने की मुर्कियाँ, फूल–पत्ती, बलेवड़ा, कमर में कणकती, हाथों में चांदी के कड़े और दायें पैर में कड़ा धारण करते हैं, इसे 'छेलकड़ा' कहा जाता है। जनजातीय समुदाय में आभूषण सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि का प्रतीक माने जाते हैं। पुत्री की शादी में पिता द्वारा चांदी के आभूषण ज्यादा दिये जाते हैं। स्त्रियों के आभूषणों में बोरला, शीशफूल, नथ, बाँटा, ओंगनिया, मुरकी, झुमका, हंसली, तिमणियाँ, मोगरी, पंचमनिया, गिलसरी, कण्ठी, गुलीबंद, खुंगाली, खंगवाडी, पूंजी, नेवरी, बंगली, हथफूल,

कणकती, टंकणा, बिछिया प्रमुख हैं।

खानपान

जनजातियों में मांसाहार व शाकाहार करने वाले दोनों ही वर्ग पाए जाते हैं। दक्षिणी राजस्थान के जनजातीय परिवारों में मांसाहार की प्रवृत्ति अधिक देखने को मिलती है। काश्तकार मीणाओ में मांसाहार को हेय दृष्टि से देखा जाता है। इनके भोजन में दूध–दही, छाछ इत्यादि का प्रयोग प्रमुख रूप से किया जाता है। खाद्यान्नों में मक्का, बाजरा, ज्वार, गेहूँ प्रमुख हैं। मद्यपान की प्रवृत्ति काश्तकार एवं अन्य वर्ग की तुलना में कम देखने को मिलती है। ग्रामीण क्षेत्र में निवासरत जनजातियों में आज भी भोजन चूल्हे पर ही पका कर खाया जाता है। शहरों में बसे हुए जनजाति के कुछ लोगों में चूल्हे पर खाना पकाने की प्रवृत्ति देखने को मिलती है किन्तु अधिकतर शहरवासी जनजातीय परिवार गैस, स्टोव का प्रयोग भोजन पकाने में करने लगे हैं।

विवाहादि संस्कार

जनजातियों में हिन्दुओं के समान ही विवाह संस्कार का महत्वपूर्ण स्थान है। विवाह पुरोहितों के द्वारा ही सम्पन्न कराया जाता है। अधिकतर जनजातीय परिवार अपने ही समुदाय में विवाह करते हैं। विवाह माता–पिता द्वारा तय किया जाता है। विवाह चार गोत्र को बचाकर तय किया जाता है, तत्पश्चात् सगाई की रस्म की जाती है, जिसे 'टीका' कहा जाता है। अन्य रस्में हिन्दूओं के विवाह की तरह ही सम्पन्न होती हैं। जनजातियों में 'नाता प्रथा' भी पाई जाती है, परित्यक्ताओं या विधवाओं द्वारा दूसरा विवाह 'नाते' के रूप में किया जाता है। इस समुदाय में प्रचलित नाता प्रथा, विधवा विवाह के रूप में भी देखी जाती है, पति की मृत्यु के पश्चात् अधिकतर पति के छोटे भाई से स्त्री का विवाह कर दिया जाता है। जनजातीय विवाहादि संस्कार में कुछ विशेषताएँ पाई जाती है, जैसे– नाता प्रथा, तलाक प्रथा इत्यादि। किन्तु इसमें कुछ कुरीतियाँ भी व्याप्त है जैसे बाल विवाह, दहेज प्रथा आदि। बाल विवाह इन समुदायों की प्रमुख कुरीति है, आर्थिक व सामाजिक कारणों से छोटी उम्र में ही शादियाँ कर दी जाती हैं। कई बार तो गोद में खेलने वाले बच्चों, बच्चियों को वैवाहिक बंधन में बांध दिया जाता है, इससे आगे कई प्रकार की समस्याओं का जन्म होता है, यथा–अपरिपक्व मातृत्व एवं कम उम्र की विधवाओं की संख्या में वृद्धि इत्यादि।

अतिथि सत्कार

जनजातियों में भारतीय संस्कृति की 'अतिथि देवो भवः' उक्ति की भावना परिलक्षित होती है। अतिथि को 'पाहुणा' के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। अपरिचित मेहमानों को भी इस जाति में बहुत सम्मान किया जाता है। घर आए 'पाहुणा' को भोजन ग्रहण कराए बिना घर से विदा नहीं किया जाता है तथा घर पर रूकने का आग्रह भी किया जाता है।

मनोरंजन

यह मनोरंजन प्रिय जनजाति है। मनोरंजन हेतु इस जनजाति के लोग अनेक प्रकार के क्रिया–कलापों में भाग लेते है, यथा– लोकगीत, नृत्य, उत्सव, मेले आदि। लोकगीतों ने मीणा जनजाति को विशिष्ट पहचान दिलाई है। मीणा जनजाति में गाए जाने वाले गीत उत्साहवर्द्धक होते हैं। इनमें नैराश्य का अभाव पाया जाता है। भर्तृहरि जी, कैला देवी, नारायणी माता, नई के महादेव जी, बरवाड़ा की चौथमाता, सवाईमाधोपुर के गणेशजी इत्यादि मेलों में भी मीणा जनजाति के गीतों की गूँज सुनाई देती है एवं वहां के वातावरण को उल्लासपूर्ण बना देती है।

पंचायत–प्रथा

जातिगत पंचायतें भारत की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था का आधार एवं अभिन्न अंग रही हैं। राजस्थान में कमोबेश आज भी ये जातिगत पंचायत की व्यवस्थाएँ विद्यमान हैं, जो इन समुदायों में भी देखने को मिल जाती है। जनजातियों में भी सामाजिक विवादों से निपटारे हेतु जातिगत पंचायतों का आयोजन किया जाता रहा है एवं जाति के पंच–पटेलों की संबंधित विवाद को निपटाने में निर्णायक भूमिका रहती है। पंचायतों के द्वारा जाति से बहिष्कार (हुक्का–पानी बंद करना), जाति–भोज, गंगा में स्नान, पंचों की जूतियाँ सिर पर रखना, पंचों को भेंट देना, धूप में खड़ा करना, एक टांग पर खड़ा करना, कबूतरों को अनाज जैसे शारीरिक व आर्थिक दण्ड दिए जाते हैं। पंचायतों में किए जाने वाले निर्णयों को जनजाति समाज में मान्यता प्राप्त होती है एवं उनके आदेशों का पालन किया जाता है। पंचायतों द्वारा दिए गए दण्ड को भोगने वाले व्यक्ति की जनजातीय समाज में सामाजिक प्रतिष्ठा समाप्त हो जाती है। वर्तमान में भी इस प्रकार की विशाल पंचायतों का आयोजन होता है जिसमें समाज के गणमान्य व्यक्ति भी भाग लेते हैं।

जातिगत पंचायतें निष्पक्ष कार्य करने के स्वरूप तक उचित थीं किन्तु समय के साथ इस व्यवस्था में कुछ विकृतियाँ आ गई हैं। पूर्व पंच–पटेलों के अशिक्षित होने के कारण उनके द्वारा दिये गए निर्णय कई बार अमानवीय होते हैं, उनका फैसला नहीं मानने पर पीड़ित पक्ष का मानसिक, शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न किया जाना आम बात है। इसी प्रकार के उत्पीड़न से संबंधित एक मामला राजस्थान उच्च न्यायालय के सामने प्रस्तुत किया गया। माननीय न्यायालय के निर्णय अनुसार राजस्थान में जातिगत पंचायतों द्वारा किसी को भी जाति से बाहर करने, शारीरिक व आर्थिक दण्ड देने तथा हुक्का पानी बंद करने का दण्ड संबधी निर्णय सुनाने का अधिकार नहीं है। इस निर्णय के संदर्भ में राजस्थान सरकार के गृह विभाग ने अपने पत्र क्रमांक प–10 (26) गृह 13, दिनांक 14.2.2001 के द्वारा समस्त जिलाधीशों और पुलिस अधीक्षकों को निर्देश दिए हैं कि इस निर्णय का उल्लंघन करने वालों के विरूद्ध तुरन्त कार्यवाही करें, जातिगत पंचायत द्वारा उत्पीड़न की सूचना पुलिस मुख्यालय को मिली तो इसे जिले के उच्च अधिकारियों के उत्तरदायित्व और नेतृत्व की कमी का परिचायक माना जाएगा।

धार्मिक व्यवस्था

जनजाति प्रकृति एवं शक्ति की उपासक रहे हैं, किन्तु समयान्तर में इन जातियों द्वारा हिन्दू–धार्मिक मान्यताओं एवं विश्वासों को काफी हद तक आत्मसात किया जा चुका है। हिन्दू धर्म की देवी–देवताओं को इस जाति द्वारा पूजा जाता है एवं त्यौहार–उत्सव इत्यादि हिन्दुओं के समान ही मनाए जाते हैं। जनजातियों में लोकदेवता व लोकदेवियों का प्रमुख स्थान होता है। कुलदेवता या कुलदेवी की कुल–रक्षक के रूप में आराधना की जाती है। ये जनजातियाँ शक्ति की उपासक रही है, शक्ति के रूप में दुर्गा माता की पूजा की जाती है, महादेव की पूजा भी विशेष रूप से की जाती है। आज भी जनजाति परिवारों में शिव मंदिर बनाने की परम्परा जारी है। अमावस्या के दिन पितरों को जल–अर्पण करने की रस्म भी मिलती है। जनजातियों के प्रमुख धार्मिक स्थलों में जीणमाता (सीकर), गौतमनाथ शिवालय (चित्तौडगढ), सीतामाता (प्रतापगढ़), नई के

नाथ विशाल शिवालय (बॉसखों), रणथम्भौर का गणेश मंदिर, आमेर की अम्बिका देवी, जोबनेर माता एवं पाण्डूपोल, भर्तृहरि तपोस्थली (अलवर) प्रमुख हैं।

निष्कर्ष

सामाजिक स्तरीकरण व्यवस्था के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों को ग्रामीण क्षेत्रों में भी व्यवहारिक रूप से अन्य वर्गों से निम्न स्तर प्राप्त है। सामान्य वर्ग और अन्य पिछड़े वर्ग के लोग अनुसूचित जातियों की तुलना में अनुसूचित जनजातियों के लोगों को सुविधाएँ कम उपलब्ध है। जिसके कारण इस खास वर्ग में आने वाली जातियों के लोगों को शिक्षा में आरक्षण प्रावधान का भरपूर लाभ नहीं मिल पा रहा है। हमारे यहाँ की शिक्षा पहले धर्म के शिकंजे में थी अब सत्ता और कॉरपोरेट के लोगों ने हथिया ली है। शिक्षा सुधार हेतु कई आयोग बने लेकिन उनके द्वारा जो भी संशोधन हुए वे धूल फांकते नजर आये और इन वर्गों को आरक्षण से लाभन्वित नहीं किया जा सका और इनकी सामाजिक स्थिति ज्यों का त्यों रह गया है।

संदर्भ

1. अल्तेकर, ए.एस. – .प्राचिन भारतिय शिक्षा पद्धिति, मोतिलाल बनारसीदास प्रकाशन दिल्ली, (1959)
2. अवस्थी, अमरेश्वर एवं रामकुमार – आधुनिक भारतीय सामजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, दिल्ली (1961)
3. सलिल कुमार अनिल – भारत का संविधान, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, (2013)
4. पिरूपके – जनजाति छात्रों की समस्याएँ, इन्डियन जनरल, (1973)
5. शर्मा आर. एस. – प्राचिन भारतीय विचार एवं समस्याएँ, पुस्तक महल दिल्ली (1977)
6. मीना यशोदा – मीणा जनजाती का इतिहास, जयपुर पब्लिकेशन हाउस जयपुर (1987)
7. झरवाल लक्ष्मीनारायण – मीणा जनजाती एक परिचय विषय शोध पत्र, जयपुर पब्लिकेशन जयपुर (1975)
8. गुप्ता ए.पी. – अनुसूचित जाति, पिछडी जाति व सामान्य जातियों का तुल्नात्मक अध्ययन शोध पत्र (2001)
9. मीणा आँचल – मीणा जति के सामाजिक व राजनैतिक उत्थान पर मीणा संगठनो की भूमिका शोध पत्र, राजस्थान विश्वविद्यालय (2012).